सिनेमा और आदिवासी विमर्श

ज्ञानेश्वर रामकिसन हालसे* **प्रो. (डॉ.) विजय गणेशराव वाघ†**

drhalse10@gmail.com **dr.vijay.g.wagh@gmail.com**

शोध सार:-

समाज की वेदना और संवेदना का चित्रण साहित्य में प्रस्तुत होता है। जबकि समाज की गंभीर चेतना, संजीव घटना और सर्जन शीलता का चित्रण सिनेमा में सिनेमा में दिखाया जाता है। सिनेमा में सशक्त लोग एवं समाज का चित्रण बखूबी अच्छा दिखाया जाता है। उनकी कुनीति, गलतियाँ छुपाई जाती है। बल्कि अशक्ति लोगों की अच्छाई होकर भी सिनेमा नहीं दिखाई देती। जानबूझकर अशक्त लोगों का मजाक बनाया जाता है। आज हम ऐसे ही दिखने के लिए अशक्त समाज हैं 'आदिवासी' लेकिन यह समाज विश्व मूल्यों का खान है। आदिवासी सभ्यता दुनिया में सबसे जादा प्रकृति के करीब मानी जाती है। इस धरती और संसार को प्रकृति के प्रकोप से बचने का एक उपाय है। वह है आदिवासी सभ्यता।

लेकिन हमारे हिंदी सिनेमा 110 साल पूरे होने के बाद भी आदिवासी समाज सिनेमा जो पुराना चित्रण है। जैसे की आदिवासी लोग अज्ञानी, जानवर, राक्षस, उपद्रवी दिखाते थे। अभी भी 110 साली के बाद भी सिनेमा नहीं बदले 110 सालों में विज्ञान और तंत्र ज्ञान ने बहुत कुछ बदला लेकिन सिनेमा ने आदिवासी समाज की और देखने का नजरिया नहीं बदला है। दरअसल आदिवासी समाज अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए बहुत संघर्ष करता अब तक प्रकृति के साथ खड़ा है। सभ्य समाज प्रकृति के विरुद्ध में पूंजीपतियों के साथ है। यह बदलना चाहिए। आदिवासी समाज के अच्छे विचार, कार्य सिनेमा के माध्यम से दुनिया के सामने लेने होंगे। तब प्राकृतिक आपदाओं को हम सब मिलकर मुकाबला कर सकते हैं। प्रकृति भाषा एवं संकेत सिर्फ आदिवासी ही समझ सकता हैं। प्रकृति को वस्तु एवं भोग वस्तु समझने वाला सभ्य समाज नहीं।

बीज शब्द :- गंभीर चेतना, सर्जनशीलता, विश्व मूल्य, सभ्यता, पूँजीवादी, प्रकृति

आदिवासी समाज हमारे देश की प्राचीन जनजाति हैं। वे सदियों इस देश में निवास करते हैं। इसी लिए उन्हें देश के ‘मूल निवासी’ कहा गया है। आदि मतलब सबसे पहले और वासी मतलब रहनेवाले सबसे पहिले रहनेवाले आदिवासी ही इस देश के मालिक है। यह हमारे देश का न्यायालय भी मानता है। आदिवासी लोग प्रकृति पूजक होते हैं। आदिवासी अपने अस्मिता और अस्तित्व के लिए सदियों से यह की व्यवस्था से,

*** शोध छात्र एवं सहायक अध्यापक, जिल्हा परिषद प्राथमिक शाळा मांगवाडी, जि. वाशिम**

† शोध-निर्देशक, हिंदी विभाग,सहयोगी प्राध्यापक, तोष्णीवाल कला,वाणिज्य और विज्ञान महाविद्यालय,सेनगाव. जि. हिंगोली. (महाराष्ट्र)

प्रस्थापित व्यवस्था से पूंजीपतियों से, धर्मवादी शक्तियों से, साहूकारों से, संघर्ष करते रहे है। इस संघर्ष में बिना पैसे, हत्यार के अशक्त लोग सच्चे होने के बावजूद भी शक्तिशाली लोग से लढ़ना, संघर्ष करना पड़ा यह हमारे देश का इतिहास है।

यह संघर्ष जब सिनेमा के माध्यम से समाज के सामने आता है। तो सिनेमा आदिवासी लोगों को समाज के सामने उनका चित्रण अज्ञानी, जानवर और राक्षस के बराबर दिखाया जाता है। आदिवासी सभ्यता और पूर्वजों को अपमानित किया जाता है। उन्हें असंस्कृत, असभ्य, जंगली बताकर हास्यास्पद दिखाया जाता है। हमारे हिंदी सिनेमा जगत में सैकड़ों फिल्म बनायी है। लेकिन आदिवासी समाज का सच्ची दास्ताँ दिखाने वाले दो अंक के नंबर तक सिनेमा आदिवासी लोगों के न्याय देने के लिए नहीं बनी यह समाज का दुर्भाग्य है। जिस समाज का इतिहास इस भूमि में सदियों से है। यह की प्रकृति को जो पूजते हैं। जिसे भगवान मानते हैं। प्रकृति के संकेतों की भाषा समझते हैं। इस महान समाज के मूल्यों और संस्कारों को यह का खुद को सभ्य कहनेवाला समाज समझ नहीं पायी है। आदिवासी समाज यह के जल, जंगल और जमीन के लिए सदियों से लड़ता आ रहा है। इन्हें बचाने के लिए देश में अंग्रेजों से सबसे पहिले लढा। अंग्रेज भी आदिवासी लोगों से पंगा लेने के बदले उन्हें उलझाने आसान समझ रहे थे। यह घटना जब सिनेमा के माध्यम से दिखाई जाती है। इसीलिए उनपर अन्याय किया जाता है। लगन नहीं भरते इस तरह का चित्र लोगो के सामने सिनेमा के माध्यम से लाया जाता है।

भारतीय सिनेमा का इतिहास हम जब देखते हैं तो उसकी शुरुआत धुंडीराज गोविंद फाल्के नाम से शुरु होती है। जिन्हें हम दादासाहब फाल्के नाम से परिचित है। उन्होंने 1913 में पहली भारतीय फिल्म बनाई ‘राजा हरिश्चंद्र’ देश की पहिली फिल्म बनाने वाले दादासाहब के भारतीय सिनेमा के ‘जनक’ और भारतीय सिनेमा के ‘पितामह’ भी कहकर जाने जाते हैं। उन्होंने इसके पश्चात 1913 में मोहिनी भस्मासुर, 1914 में – सत्यवान सावित्री, 1917 में ‘लंका दहन’ जैसे दर्जन फिल्म बनाते गये। उनकी जादातर फिल्में मूक थी, जो अभिनय के द्वारा लोगों को मनोरंजन करती थी। शुरुआती दौरे में उन्होंने फिल्म मनोरंजन के लिये बनाई लेकिन सिनेमा जब समाज पर प्रभाव डालने लगा तो उन्होंने सामाजिक सिनेमा बनाने लगे उसी में उन्होंने 1936 में ‘अछूत कन्या’ नामक सिनेमा बनाया जिसमें अंतरजातीय विवाह जैसे गंभीर समस्या दिखाया गया। दादासाहब ने बाद में जो आदिवासी संबंधित सिनेमा बनाये उनमें आदिवासी लोग चित्रण असभ्य तरीके से दिखाया है।

आदिवासी लोग को भारतीय संविधान में उन्हें अनुच्छेद 342 के तहत अनुसूचित जनजाति के रूप में संबोधित किया है। आदिवासी जल, जंगल, जमीन और जीवन को एक दूसरे से भिन्न नहीं मानते उनके जीने का यह आधार है। ‘आदिवासी’ शब्द कोई जाति गत शब्द नहीं बल्कि मानव सभ्यता का संरक्षक, प्रकृति का पूजक और प्रकृति की रक्षा करने वाली प्रकृति का सच्चा धरतीपुत्र है। हमारे देश में 428 जनजाति अधिसूचित हैं। वास्तविक में यह संख्या 642 है। जनसंख्या की दृष्टि से एशिया में सबसे ज्यादा आदिवासी भारत में निवास करते हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार आदिवासी समुदाय है। राज्यों और 6 केंद्र शासित राज्यों में फैले हुए हैं।

भारतीय सिनेमा में आदिवासियों का स्थान इतना होगा की वो ना के बराबर है। और आदिवासियों पर जो सिनेमा बनाते हैं। वह सब गैर आदिवासी लोग है। आदिवासी बनकर उनके अभिनय में आदिवासियों की सच्ची अस्मिता, अस्तित्व, कला, संस्कार, अपनापन नहीं आ सकता बल्कि यह लोग आदिवासी संस्कृती,

परंपराएँ, रिती रिवाज, त्यौहार, इतिहास, सभ्यता कला, प्रकृत पूजक धर्म उनका इस तरह से प्रस्तुतीकरण करते हैं। की मानो इनको आदिवासी सभ्यता का, समाज का अपमान करना हो।

इस सभ्य समाज के लोग जो पूँजीवादी, धर्मवादी, राजनैतिक दल के लोग सिनेमा के क्षेत्र के लोग अपना मुनाफा देखकर काम करते हैं। यह उनके सोचने का काम करने का तरीका है। उसमें वो प्रकृति का ख्याल नहीं करते इसी कारण सिनेमा जगत में आदिवासी मूल्यों को समाज के सामने ना लाकर उनके जिस दिखावे, पहनावे से रुपये कमाया जा सके वही बात मनोरंजन और दिखावे के साथ समाज के सामने लाई जाती है। इसी लिए आदिवासी को सिनेमा में नकारात्मक, दोयम चित्रण, उपद्रवी वर्णन के साथ दिखाया जाता है। उनके मूल्यों की, सभ्यता की कोई कद्र नहीं होती।

भारतीय सिनेमा जगत में 1942 में बनी फिल्म 'रोटी' जिसमें एक लड़की दर्शकों को आकर्षित लगे इसी लिए फुल, पत्ते लपेटकर नाचती दिखाई देती है। जब की यह कला आदिवासी का नाचना गाना नहीं है। फिर भी सिनेमा में दिखाया जाता है। कई फिल्मों में आदिवासियों को अर्धनग्न स्थिति में दिखाया जाता है यह बहुत ही अपमान जनक है।

1958 में बनी फिल्म 'मधूमती' इसमें भी आदिवासी लड़की नाचते-गाते असभ्य तरकी से दिखाया गया है। आदिवासी समाज का नृत्य ना दिखाकर आदिवासी लड़के से दूसरे नृत्य दिखाया जाता है।

1959 में बनी 'सुजाता' नामक फिल्म अंतरजातीय विवाह, छुआ-छूत जैसी गंभीर समस्या के समाज सामने लाती है। इस तरह के विवाह से लड़की को कितनी मुसीबतों को सामना करना पड़ता यह दिखाया गया है।

1983 में आई बालू महेंद्र की फिल्म 'सदमा' आदिवासी समुदाय के बारे में मिथकीय चित्रण दिखाया जाता है।

1976 में बनी 'मृगया' फिल्म पहिली बार आदिवासी समस्या को केंद्र में रखकर इस फिल्म के बनाया गया। जिसमें आदिवासी इमानदारी होकर भी कैसे व्यवस्था का शिकार होता है यह दिखाया गया है।

1980 में बनी फिल्म 'आक्रोश' इस फिल्म में आदिवासी पात्र व्यवस्था को शोषण और अन्याय से खुद को मूक कर देता है। इस फिल्म में एक आदिवासी महिला नागी लहन्या है। जिसपर सामूहिक बलात्कार वह के ताकतवर लोग करते हैं। उनका विरोध करने पर मारपीट पर उतर आते हैं।

'न्यूटन' नामक फिल्म 2017 में बनी जिसमें छत्तीसगढ़ राज्य में आदिवासी इलाकों में होने वाली चुनाव प्रक्रिया को दिखाया गया है। छत्तीसगढ़ नक्सली क्षेत्र है। और वह ये लोग बहुत अनपढ़ है। पुलीस कहती है मतदान करो और नक्सली कहते मतदान मत करो। इसी बिच संघर्ष होता तो वह पर ईमानदार ऑफिसर कैसे तैनात होकर काम करता इसका चित्रण दिखाया गया है।

हिंदी भाषा के पश्चात अन्य बहुत सारी भाषाओं में आदिवासी समाज का चित्रण सिनेमा दिखाया गया है। एस. एस. राजमौली द्वारा निर्देशित फिल्म 'बाहुबली द बिगनिंग' 2015 में बनी फिल्म काफी मशहूर हुयी। अपनी भाषा को तोडकर बहुत सारी मोटी कमाई इस फिल्म ने की है। इस फिल्म में नायक महिष्मती के सेनापति बाहुबली का आदिवासी कालकेय साथ युद्ध दिखाया की शुरुआत में कालकेय आदिवासी पर आरोप

लगाया जाता है की वह एक दरिंदा क्रूर शासन है। उसने स्त्रियों का बलात्कारी और बच्चों का हत्यारा दिखाया गया है। उसे दिखाने का तरीका बेहद ही अमानवीय तरीका था।

2009 में बनी फिल्म 'अवतार-1' और 2022 में बनी 'अवतार-2 द वे ऑफ वॉटर' जिसके निर्देशक जेम्स कैमरून है। इस फिल्म वैज्ञानिक प्रयोग करने के लिए आदिवासी इलाका चुना जाता है। क्योंकि वह बहुत सारी खनिज संपदा आसानी से मिलती है। सभ्य समाज के लोग औद्योगीकरण, विज्ञान, तंत्र ज्ञान का प्रकृति के विरुध्द कैसे काम करते हैं। आदिवासी प्रकृति को बचाने के लिए कैसे प्रकृति के हर जीव को साथ लेकर उनसे लढते हैं। यह संघर्ष में प्रकृति के पुत्र आदिवासी जितते हैं। लेकिन बहुत कुछ खो जाते हैं।

इस सिनेमा में आदिवासी को कुछ अदभूत गुण ताकत और पूर्वजों के कुछ उपाय दिखाई देते हैं। आदिवासी को प्रकृति के हार जीवों से कितना लगान है। वे सभी जीवों की भाषा समझ सकते हैं। प्राकृतिक संकेतों को पहचान सकते हैं। सागर के जीवों के साथ उनका कितना गहरा लगाव है। यह सब अदभूत, रोमांचकारी तरीके के निर्देशक ने दिखाया है। जिससे दुनिया को आदिवासी लोग और उनकी सभ्यता, रितीरिवाज, मूल्य, रिश्ते-नाते, नेता, प्रकृति पूजक समाज इस में दिखाई देता है । एक बार गाँव के सरपंच के घर में साँप पकड़ने के बाद वह ताकतवर मालिक ने उसपर गहने चुराने का आरोप लगाया।

राजकन्नू घर पर न मिलने पर उसके भाई और घर के चार लोगों को पुलिस उठा के ले गयी। उन सभी को बहुत मारा। उसके बिवी संगनी को भी जेल में डालकर बहुत मारा। दो दिन बाद राजकन्नू को पकड लिए बाद में कुछ लोगो को छोडा और दूसरे इंल्जाम पकड लिया। सभी को बहुत बेरहमी से मारा संगीनी को मारकर छोड दिया। दूसरे दिन संगनी पती से मिलने पहुची तो पती मर गया था। उसने विरोध किया तो उसे और मारकर घर भेज दिया। दूसरे दिन उसके पती के लाश दूसरे राज्य में मिली लेकिन लावारीश कहकर टाल दिया।

पुलिस और ताकतवर लोगों को हिला दिया। बहुत अन्याय, अत्याचार की परम सीमा लांघी जब वह गर्भवती संगीनी पर अन्याय करते हैं उसे मारते हैं, पर उसने हार नहीं मानी। अंत में उसे न्याय मिला।

यह फिल्म ॲमेझॉन प्राइम व्हिडिओ, OTT प्लेटफॉर्म, मोबाईल, T.V. सिनेमा थेटर्स पर बहुत सफल रही और आदिवासी पर बहुत चर्चीत रही। यह फिल्म दुनिया में खूब चलने वाली पहली भारतीय आदिवासी फिल्म बनी। इस फिल्म में डॉ. बाबासाहब आंबेउकर का संविधान, और ज्ञान, हिम्मत, साहस, लिडर क्या कर सकता है? यह सभी को सिखने के लिए, संघर्ष करने के लिए मार्गदर्शन एवं प्रेरणादायी सिनेमा साबित हुआ।

2022 में बनी सिर्फ आदिवासी सच्चे लोगों लेकर बनाई फिल्म 'धाबरी कुरुवी' इस फिल्म में सच्चे आदिवासी लड़की ने भूमिका निभाई है। जो परंपरागत, अन्याय और बंधनों में बांधने वाली विचारधारा को तोडती है। निडरता से समाज संघटन और व्यवस्था से लड़ती है। आदिवासी लड़कियों के लिए प्रेरणा और अभिमान दिलानेवाली फिल्म 53 वे अंतरराष्ट्रीय भारतीय सिनेमा महोत्सव इफ्फी बहुत चर्चित रही। यह पूरा सिनेमा 'इरुला' आदिवासी बोली-भाषा में तैयार किया है। इस फिल्म के और एक खासियत है। इस फिल्म की सभी भूमिकाये सच्चे आदिवासी स्त्री-पुरुषों ने निभाई। समाज, देश, व्यवस्था और सिनेमा जगत को यह अवगत करवा दिया की हम भी कही कम नहीं है।

सिनेमा में आदिवासी समाज का जो चित्रण है पहिले से दोयम उपद्रवी, दिखाया जाता है, उन्हें पूँजीवादी, धर्मीवादी, राजनितीक संघटने से अन्याय, अत्याचार शोषण होता है। आज युग वैश्वीकरण का है। इस वैश्वीकरण और बदलती जीवन शैली में आदिवासी सभ्यता और गुणों की विश्व को जरूरत है। यह सिनेमा

जगत बदलती सिनेमा जगत की आदिवासी प्रस्तुतीकरण नई आदिवासी सिनेमा अब दिखाई दे रही है। यह हम मानवता और प्रकृति के लिए भविष्य के इतिहास में साबित होगा।

अब यहाँ से सिनेमा जगत में आदिवासी फिल्म बनी वो सकारात्मक और प्रकृति के हित में होंगी यह उम्मीद रखते हैं।

संदर्भः-

1) आकाश, प्रेम. (2018). *ग्लोबल गाँव के देवता और किस्सागो में चिचित आदिवासी*. कानपूर: समाज विकास प्रकाशन.

2) मीणा, प्रमोद. (सम्पा.). *हिन्दी सिनेमा, दलित-आदिवासी विर्मश*.

3) जलक्षत्रि, नीरा. (2013). *साहित्य और सिनेमा के अंतरसंबंध*, दिल्ली : शिल्पायन प्रकाशन.

4) जलक्षत्रि, नीरा. (2013). *साहित्य और सिनेमा के अंतरसंबंध*, दिल्ली : शिल्पायन प्रकाशन.

5) रजा. राही मासूम. (2010). *सिनेमा और संस्कृति.* दिल्ली : वाणी प्रकाशन.

6) https://www.forwardpress.in/2020/08/analysis-tribes-indian-cinema-hindi

7)https://iyemarathichiyenagari.com/dhabri-kuruvi-first-indian-film-starring-from-triabl-people